अधिगमकर्त्ता का विकास एवं शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया

(झ) इस विधि से बालकों, किशोरों एवं प्रौढ़ों की अभिवृत्तियों एवं दृष्टिकोणों का उचित निर्माण किया जाता है जैसा कि पावलव का विचार है कि सम्बद्ध प्रतिवर्त एक प्रकार से सभी आदतों की शृंखला मात्र है जो ट्रेनिंग, शिक्षा और अनुशासन पर आधारित है।

(झ) समाज के साथ अनुकूलन करने में इस विधि की उपयोगिता पाई जाती है।

(ट) कुछ मनोचिकित्सकों का विचार है कि इससे मानसिक रोगों के उपचार में भी सहायता ली जा सकती है। इस विधि से दबी हुई इच्छाएँ प्रकट हो जायेंगी और मानसिक रोग समाप्त होगा।

(ठ) इस विधि का प्रयोग मानव अपनी अवस्था के बढ़ने पर अधिक करता है, उसे सम्बद्ध प्रतिवर्त्त या अनुक्रिया में सरलता होती है। आगे के जीवन में इस विधि की उपयोगिता बहुत अधिक होती है।

उपर दी गई सीखने की विधियों के अलावा कुछ विद्वानों ने सीखने की निम्नलिखित विधियाँ बताई हैं—

(1) करके सीखने की विधि
(Learning by doing Method)

(2) अवलोकन से सीखने की विधि
(Learning by observation Method)

(3) सामूहिक विधि
(Group Method of Learning)

(4) व्याख्यान विधि
(Lecture Method)

(5) वाद-विवाद विधि
(Discussion Method)

(6) पूर्ण विधि
(Whole Method)

(7) अंश विधि (खण्ड विधि)
(Part Method)

(8) सुप्त अधिगम विधि
(Method of Sleep Learning)

(9) परीक्षण विधि
(Method of Learning by Experiment)

वास्तव में ये वे प्रविधियाँ हैं जिससे कि सीखने की प्रक्रिया में सहयोग मिलता है फिर भी इन्हें सीखने की विधि मान लेने में कोई हानि नहीं होती है। इनका प्रयोग शिक्षण के समय अध्यापक स्वयं करते हैं जैसी परिस्थिति आती जैसे विषय होते हैं।

शिक्षण अधिगम-प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक

अधिगम या सीखने को शैक्षिक प्रक्रिया का प्राण कहा जा सकता है। जैसा कि वुडवर्थ ने कहा है, "शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में अन्य कोई पक्ष इतना महत्व नहीं रखता जितना कि अधिगम।" शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में सिम्पसन का कथन है कि "अन्य दशाओं के साथ-साथ सीखने की कुछ दशाएँ हैं—उत्तम स्वास्थ्य, रहने की अच्छी आदतें, शारीरिक दोषों से मुक्ति,

अध्ययन की अच्छी आदतें, संवेगात्मक सन्तुलन, मानसिक योग्यता, कार्य सम्बन्धी परिपक्वता, वांछनीय दृष्टिकोण और रुचियाँ, उत्तम सामाजिक अनुकूलन, रूढ़िबद्धता और अंधविश्वास से मुक्ति।'' अधिगम वस्तुत: पंचमुखी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत शिक्षार्थी, शिक्षक, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि तथा पर्यावरण आते हैं। यदि अधिगम-भवन के ये पाँचों स्तम्भ सुदृढ़ और सशक्त होते हैं तो अधिगम-प्रयोजन की परिपूर्ति में कठिनाई नहीं होती है। अधिगम-प्रक्रिया अपने प्रयोजन की परिपूर्ति सफलता के साथ कर सके, इसके लिए यह आवश्यक होता है कि वे कारक जो अधिगम-प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, उपयुक्त और अनुकूल हों। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने सफल और सार्थक अधिगम के लिए अपेक्षित कारकों पर अपनी-अपनी दृष्टि से विचार व्यक्त किया है। यहाँ हम अधिगम-प्रक्रिया से जुड़े उपर्युक्त पाँचों तत्वों के संदर्भ में सीखने को प्रभावित करने वाले विविध कारकों पर विचार करेंगे।

1. शिक्षार्थी से सम्बन्धित कारक
(Factors Related to Students)

शिक्षार्थी शिक्षण अधिगम-प्रक्रिया का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण केन्द्र बिन्दु होता है। वस्तुत: समस्त शैक्षिक प्रक्रिया का प्रमुख उद्देश्य शिक्षा के माध्यम से शिक्षार्थी के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाना होता है। अतएव शिक्षार्थी अधिगम-प्रक्रिया में अपनी अपेक्षित भूमिका अदा कर सके, इसके लिए यह आवश्यक होता है कि शिक्षार्थी अपनी भूमिका का निर्वाहन करने के योग्य हो। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सफल अधिगम के लिए शिक्षार्थियों में निम्नलिखित गुण आवश्यक होते हैं—

(i) शिक्षार्थी का शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य—एक सुप्रसिद्ध कहावत है कि—''स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है।'' शिक्षा एक मानसिक प्रक्रिया है। अतएव स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क रहने पर ही शिक्षार्थी प्रदत्त ज्ञान को गृहण करने में समर्थ हो सकता है। प्राय: यह देखा जाता है कि अच्छे शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य वाले शिक्षार्थी जल्दी सीख जाते हैं। इसके विपरीत शारीरिक-मानसिक दृष्टि से दुर्बल शिक्षार्थी सीखने में पिछड़ जाते हैं। शिक्षा मनोवैज्ञानिक स्वार्ज (Schwartz 1977) ने अपने अध्ययनों द्वारा इस तथ्य की परिपुष्टि भी की है।

(ii) शिक्षार्थी की आयु और परिपक्वता (Age and Matutiry)—शिक्षार्थी से सम्बन्धित कारकों में आयु एवं परिपक्वता का भी अपना स्थान रहता है। शिक्षा मनोवैज्ञानक गिलफर्ड (Gilford, 1952) ने अपने अध्ययन में यह पाया कि शिक्षण पर उम्र का गहरा प्रभाव पड़ता है। शैशवावस्था में विषय को प्राय: बालक मन्द गति से सीखते हैं, बाल्यावस्था में वे वैसे ही विषय को कुछ तेजी से सीखते हैं तथा किशोरावस्था आने पर वे और भी तेजी से विषय को सीखते हैं। अपने अध्ययन में गिलफर्ड ने यह भी पाया कि लड़कियाँ अपने समान उम्र के लड़कों की अपेक्षा किसी पाठ को जल्द ही सीख लेती हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि लड़कियाँ सामान्यतया लड़कों की अपेक्षा किसी पाठ को अधिक तत्परता से सीखने के लिए कुछ पहले परिपक्व हो जाती हैं।

(iii) शिक्षार्थी की सीखने की इच्छा-शक्ति (Will Power of the Learner)—प्रो० नन ने बालक के विकास में उसकी आनुवंशिकता तथा उसके वातावरण के अतिरिक्त तीसरा प्रमुख कारक बालक की स्वयं को संकल्प-शक्ति माना है। सीखने में यह कारक बहुत प्रभाव डालता है। जन्मजात शक्तियों तथा सामाजिक परिस्थितियों के बावजूद बालक अपनी इच्छा शक्ति से बहुत कुछ सीख सकता है। यदि किसी शिक्षार्थी में सीखने की इच्छा-शक्ति नहीं है तो शिक्षण के प्रयास प्रभावी नहीं होंगे। अंग्रेजी में एक कहावत है— ''You can take the horse to the pond but you can not make him drink.'' अर्थात् ''आप घोड़े को सरोवर-तट पर ले जा सकते हैं पर आप उसे पीने के लिए बाध्य नहीं कर सकते।''

यही बात विद्यार्थियों में कही जा सकती है। आप विद्यार्थियों को विद्यालय में दाखिला तो दिला सकते हैं किन्तु यदि उसकी पढ़ने में रुचि नहीं है, पढ़ने की इच्छा शक्ति नहीं है तो वह कुछ भी सीख नहीं सकेगा। प्राय: देखा गया है कि सीखने की प्रबल इच्छा शक्ति होने पर शिक्षार्थी कठिन से कठिन कार्य को भी सरलतापूर्वक सीख लेता है।

(iv) शिक्षार्थी की प्रतिक्रिया (Response of a Learner)—श्री हल के मतानुसार प्रतिक्रिया सीखने का तीसरा स्तर है। अर्थात संकेत और प्रणोदन के बाद ही प्रतिक्रिया की उत्पत्ति की पूर्ण सम्भावना होती है। ऐसी परिस्थिति के उत्पन्न होने का मुख्य कारण है संकेत की कमी क्योंकि संकेत पूर्व अनुभव के रूप में कार्य करते हैं। चूँकि बच्चों में अक्षर ज्ञान के पूर्व संकेत की अनुपस्थिति होती है अत: उनकी प्रतिक्रिया पर इस बात का प्रभाव परिलक्षित होता है। प्रतिक्रियाओं के कारण ही अधिगमकर्ता के सीखने की सफलता या असफलता का निर्धारण होता है। जैसे—अपने जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में अक्षरों के प्रति बच्चों की प्रतिक्रियाओं में अन्तर पाया जाता है। ऐसा देखा जा सकता है। कि जिन बच्चों की प्रतिक्रिया अक्षर-ज्ञान के प्रति सकारात्मक होती है वे शीघ्र सीखते है और जिन बच्चों की प्रतिक्रिया उपयुक्त नही होती है वे सीखने की प्रक्रिया में मनोयोग से नहीं लगते और या तो मंद गति से सीखते है या नहीं भी सीखते हैं।

(v) शिक्षार्थी की बुद्धि—बुद्धि मनुष्य की मानसिक शक्तियों का मूल स्रोत है। मनोवैज्ञानिकों ने अपनी-अपनी दृष्टि से बुद्धि को परिभाषित किया है। **स्टर्न के अनुसार,** "जीवन की नवीन समस्याओं के प्रति समायोजन करने की सामान्य चेतन-क्षमता ही बुद्धि है। **बकिंघम के अनुसार,** "बुद्धि अधिगम की योग्यता है।" **डियरबर्न के अनुसार,** "बुद्धि अधिगम क्षमता अथवा अनुभवों से लाभ प्राप्त करने की योग्यता है।" वस्तुत: बुद्धि प्रकृति प्रदत्त एक मानसिक क्षमता है जो वंश-परम्परा तथा वातावरण के प्रभाव से प्रभावित होती है। **जैसा कि वेश्लर ने कहा है,** "व्यक्ति के उद्देश्यपूर्ण कार्य करने, विवेकपूर्ण चिन्तन करने तथा अपने वातावरण के साथ प्रभावपूर्ण प्रभावी समायोजन की योग्यताओं की समग्रता ही बुद्धि है।" सावधानी, पर्याप्त धारण शक्ति, विचारों का समीकरण, शीघ्र समायोजन, विचारों का परिचालन, आत्म-मूल्यांकन एवं आत्मविश्वास बुद्धि की प्रमुख विशेषताएँ होती हैं। शिक्षार्थी अपनी बुद्धि के अनुरूप ही सीखता है। प्रखर बुद्धि के या मेधावी विद्यार्थी शीघ्रता से सीखते हैं। इसके विपरीत मन्द बुद्धि शिक्षार्थी की सीखने की गति मन्द रहती है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षार्थियों की बुद्धि का परीक्षण करने के लिए अनेक वैज्ञानिक परीक्षणों का विकास किया है।

(vi) अभिरुचि और अवधान एवं मनोवृत्ति—क्रो और क्रो के अनुसार, "अभिरुचि वह प्रेरणा देने वाली शक्ति है जो हमें किसी व्यक्ति, वस्तु या क्रिया की ओर अवधान के लिए प्रेरित करने की ओर संकेत करते है।" अभिरुचि व्यक्ति की वह स्थायी मानसिक अवस्था है जिसके कारण व्यक्ति किसी वस्तु, विचार या कार्य को मान्यता देता है और उसे प्राप्त करने का या महत्त्व देने का प्रयास करता है। अत: किसी चीज को सीखने के लिए उस विषय में सीखने वाले की अभिरुचि का होना आवश्यक होता है। सीखने के लिए अवधान आवश्यक होता है और अभिरुचि अवधान की आधारशिला होती है। अभिरुचि और अवधान के घनिष्ठ सम्बन्धों को देखते हुए **मैकडूगल ने कहा है**—अभिरुचि अव्यक्त अवधान है तथा अवधान अपने क्रिया रूप में अभिरुचि —'Interest is latent attention and attention is interest in action.' अभिरुचि और अवधान की भाँति मनोवृत्ति (Attitude) का प्रभाव भी अधिगम-प्रक्रिया पर अवश्य पड़ता है। मनोवृत्ति का तात्पर्य किसी उत्तेजना के प्रति व्यक्त की गई प्रतिक्रिया से है। दूसरे शब्दों में मनोवृत्ति एक मानसिक उन्मुखता (Mental orientation) है जो व्यक्ति को किसी वस्तु या उत्तेजना की ओर धनात्मक (Positive) अथवा नकारात्मक (negative) प्रतिक्रिया करने के लिए अग्रसर करती है। अभिरुचि और अवधान की भाँति मनोवृत्ति भी सीखने की अपरिहार्य दशा मानी जाती है। अनुकूल मनोवृत्ति

अधिगम या सीखने की प्रक्रिया पर सकारात्मक प्रभाव डालती है जबकि प्रतिकूल मनोवृत्ति सीखने की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। शिक्षा सकारात्मक अभिवृत्तियों के विकास में महती भूमिका अदा करती है।

(vii) अभिप्रेरण (Motivation)—अभिप्रेरण को अधिगम (सीखने) का राजमार्ग कहा जाता है—"Motivation is royal road to learning". गुड ने अभिप्रेरण को परिभाषित करते हुए कहा है—"अभिप्रेरण कार्य को प्रारम्भ करने, जारी रखने और नियमित करने की प्रक्रिया है।" क्लेयर, जोन्स और सिम्पसन के अनुसार, "अभिप्रेरण एक प्रक्रिया है जिसमें सीखने वाले की आन्तरिक शक्तियाँ या आवश्यकताएँ उसके वातावरण में विभिन्न लक्ष्यों की ओर निर्देशित करती हैं।"

अभिप्रेरण अधिगम की जीवन-शक्ति होता है। अभिप्रेरण और अधिगम के पारस्परिक सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरण की विविध विधाओं का विकास किया है। ये विधाएँ शिक्षार्थी को सीखने के लिए अभिप्रेरित करने में अत्यन्त उपयोगी हैं। वस्तुतः अभिप्रेरण शिक्षार्थी में अभिरुचि उत्पन्न करने की कला है। शिक्षक जितना ही इस कला में कुशल होगा उतना ही वह अपने कार्य में सफल होगा।

2. शिक्षक से सम्बन्धित कारक
(Factors Related to Teacher)

शिक्षक कक्षा में अधिगम-प्रक्रिया का सूत्रधार होता है। अतएव सफल, सकारात्मक अधिगम में शिक्षक की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। शिक्षाविदों ने सफल अधिगम के लिए शिक्षक से सम्बन्धित कई कारक बताए हैं। इन कारकों में मुख्य निम्नलिखित हैं—

(i) शिक्षक का व्यक्तित्व (Personality of the Teacher)—व्यक्तित्व व्यक्ति का दर्पण होता है। —Personality is the mirror of individual. वैसे तो आकर्षक व्यक्तित्व सभी का आभूषण माना जाता है किन्तु शिक्षक के लिए व्यक्तित्व का विशेष महत्व होता है। इसका मुख्य कारण है शिक्षक के व्यक्तित्व से प्रभावित होने वाले विद्यार्थियों का विस्तार। विद्यार्थियों के लिए शिक्षक एक नायक की भूमिका निभाता है। विद्यार्थी शिक्षक के आचार, व्यवहार, विचार से पूरी तरह प्रभावित होते हैं। अतएव शिक्षक का व्यक्तित्व ऐसा होना चाहिए जो शिक्षार्थियों के आचार, विचार, व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन ला सके। यह तभी सम्भव है जबकि शिक्षक स्वयं अपेक्षित शीलगुणों से समलंकृत हो। शारीरिक दृष्टि से उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली हो, मानसिक दृष्टि से वह पूरी तरह स्वस्थ हो, वह मेधावी, अध्ययनशील, परिश्रमी, कर्तव्यपरायण, चरित्रवान तथा मानवीय मूल्यों का सन्देशवाहक हो। किसी विद्यालय की शोभा जहाँ एक ओर विद्यालय के भवन, प्रांगण, क्रीड़ा-स्थल, प्रयोगशालाएँ और पुस्तकालय होते हैं, वहीं दूसरी ओर विद्यालय के अध्यापक भी होते हैं। हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि मानव सभ्यता के उन्नयन और विकास में शिक्षकों का योगदान भी सराहनीय और स्मरणीय रहा है। वस्तुतः अच्छे शिक्षकों के अभाव में शिक्षा निष्प्रयोजन रह जाएगी और अधिगम निष्प्राण।

(ii) शिक्षक का ज्ञान-भण्डार (Knowledge of the Teachers)—शिक्षा एक ज्ञानाधारित प्रक्रिया है। ऐसी स्थिति में कक्षा और विद्यालय में ज्ञान की दीप-शिखाओं को सदैव ज्योतिमय बनाए रखना शिक्षक का मूल कर्त्तव्य है। यह तभी सम्भव है जबकि शिक्षक स्वतः ज्ञान की ज्योति-शिखा से प्रकाशित हो। यदि ऐसा नहीं होता, यदि शिक्षक में अपेक्षित ज्ञान का अभाव है, उसे विषय का सम्यक ज्ञान नहीं है तो वह अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं कर सकेगा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वह दीपक जिसमें स्वयं ही 'प्रकाश' नहीं है, वह दूसरों को क्या प्रकाश दे सकेगा।

(iii) शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान (Knowledge of Educational Psychology)—सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक चार्ल्स ई० स्किनर ने शिक्षक के लिए शिक्षा मनोविज्ञान के ज्ञान की आवश्यकता पर बल देते हुए लिखा है—"शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षक निर्माण की आधारशिला है।"—Educational Psychology is the foundation stone in the preparation of teachers. निसंदेह वर्तमान युग में शिक्षा बाल केन्द्रित हो गई है और ऐसे में शिक्षक के लिए शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान अनिवार्य हो गया है। शिक्षा का उद्देश्य शिक्षार्थी के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाकर उसके व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास करना होता है, इसके लिए यह आवश्यक होता है कि शिक्षक शिक्षार्थी के व्यक्तित्व के मनोवैज्ञानिक आधारों से सुपरिचित हो। शिक्षार्थी के व्यक्तित्व के ज्ञान के बिना शिक्षक उसके व्यक्तित्व के विकास एवं व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाने में सफल नहीं हो सकता। जैसा कि एक शिक्षा मनोवैज्ञानिक ने कहा है कि "जॉन को लैटिन पढ़ाते समय यह आवश्यक है कि आप जॉन को भी जानें।" इस प्रसंग में **थॉमस फुलर** ने भी लिखा है—"एक सफल शिक्षक अपने बच्चों का उतनी ही सावधानीपूर्वक अध्ययन करता है जितनी की अपनी पुस्तकों का।" "A teacher studies his teacher's nature as carefully as their books."

(iv) शिक्षार्थी के प्रति शिक्षक का सकारात्मक दृष्टिकोण (Positive Attitude of Teachers towards his students)—शिक्षा एक सकारात्मक प्रक्रिया है। अतएव इस प्रक्रिया के सूत्रधार शिक्षक का दृष्टिकोण भी सकारात्मक होना चाहिए। कभी-कभी मनोशारीरिक दृष्टि से अस्वस्थ व्यक्ति शिक्षण संस्थाओं में आ जाते हैं। ऐसे व्यक्ति अनेक प्रकार की हीन भावनाओं एवं कुण्ठाओं से ग्रस्त होते हैं। ऐसे अध्यापकों का अपने ऐसे विद्यार्थियों के प्रति व्यवहार और दृष्टिकोण सकारात्मक नहीं होता। ऐसी स्थिति में वर्ग (कक्षा) या विद्यालय में ऐसे परिवेश या वातावरण का निर्माण नहीं हो पाता जो अधिगम या सीखने के लिए अपेक्षित नहीं होता है। अतः सफल अधिगम के लिए शिक्षक का शिक्षार्थियों के प्रति व्यवहार-सकारात्मक, उत्साहवर्द्धक, स्नेहसंप्रक्त, आत्मीयता से युक्त तथा सद्भावनापूर्ण होना आवश्यक होता है।

3. शिक्षण-विधि से सम्बन्धित कारक
(Factors Related to Teaching Technique)

अधिगम-प्रक्रिया को सफल और सार्थक बनाने में शिक्षण विधियों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने समय-समय पर विविधि प्रकार की शिक्षण-प्रविधियों का विकास किया है। इन प्रविधियों का प्रयोग कर अधिगम-प्रक्रिया को प्रभावी और सार्थक बनाया जा सकता है। शिक्षण विधि से सम्बन्धित कारकों को संक्षेप में निम्नलिखित रूप में रख सकते हैं—

(i) शिक्षण में उपयुक्त प्रविधि का प्रयोग—शिक्षण में छात्र-छात्राओं के स्तर, अभिरुचि, आकांक्षा, आवश्यकता एवं उपयोगिता के अनुसार शिक्षण-विधि का अनुगमन करना चाहिए। शिक्षाविदों ने अनेक प्रकार की शिक्षण-प्रविधियों का विकास किया है। इन पद्धतियों में किण्डरगार्टन प्रणाली, माण्टेसरी, योजना, डॉल्टन प्रणाली, बेसिक शिक्षा प्रणाली समस्या, समाधान विधि, निदानात्मक और औपचारिक शिक्षण इत्यादि काफी लोकप्रिय हैं। इसके अतिरिक्त भी अनेक शैक्षिक विधियाँ हैं जिनका शिक्षार्थी के वर्ग के अनुसार सफल अधिगम की दृष्टि से प्रयोग करना उपयोगी होगा। उदाहरण के शिशुओं के लिए किण्डर-गार्टन, माण्टेसरी या खेल विधियाँ अधिक उपयोगी होंगी। बालकों और किशोरों के लिए स्वयं करके सीखने की विधि उपयुक्त होगी तथा उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के लिए प्रयोग, खोज एवं तर्कपरक विधियां उपयुक्त होंगी।

(ii) श्रव्य-दृश्य शिक्षण उपकरणों का प्रयोग—आधुनिक युग में अधिगम-प्रक्रिया को अधिक सफल और प्रभावी बनाने के लिए श्रव्य-दृश्य शिक्षण-उपकरणों का भी प्रचुरता से प्रयोग किया जा रहा है श्रव्य-दृश्य सामग्रियों के अन्तर्गत चलचित्र, टेलीविजन, कम्प्यूटर, स्लाइड फिल्में, टेपरिकार्डर, प्रोजेक्टर,

पोस्टर, ध्वनियुक्त स्लाइडें, रेकार्ड प्लेयर इत्यादि आते हैं। उपर्युक्त उपकरणों का प्रयोग कर शिक्षण को अधिगम के अनुकूल बनाने में अच्छी सहायता मिल सकती है।

(iii) शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग— शिक्षा के आधुनिक आयामों में शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग भी एक महत्वपूर्ण विधा है। टिकेटन के अनुसार—,"शैक्षिक तकनीकी विभिन्न मानवीय तथा अन्य साधनों की सहायता से, मानव अधिगम एवं संप्रेषण के क्षेत्र में हुए शोध कार्यों के आधार पर विकसित विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रभावी शिक्षण की रूपरेखा तैयार करना है। प्रभावी शिक्षण का तात्पर्य विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु वांछित अधिगम अनुभवों की सफलता का सीमा के आकलन की प्रक्रिया से है। **प्रो० एस० के० मित्रा के अनुसार,** "शैक्षिक तकनीकी को उन पद्धतियों और प्रविधियों का विज्ञान माना जा सकता है जिनके द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।" सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री डॉ० कुलकर्णी **के अनुसार,** "विज्ञान एवं तकनीकी के नियमों एवं नये-नये आविष्कारों के शिक्षा-प्रक्रिया में प्रयोग को शैक्षिक तकनीकी के रूप में जाना जाता है।"

सामान्यतया शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत निम्नलिखित तकनीकी आती हैं—(1) व्यवहार तकनीकी, (2) अनुदेशन तकनीकी, (3) शिक्षा तकनीकी एवं (4) अनुदेश रूपरेखा। शैक्षिक तकनीकी के मुख्यतया तीन उपागम हैं—**प्रथम**—हार्डवेयर अप्रोच (Hardware approach), द्वितीय—साफ्टवेयर अप्रोच (Software approach), तृतीय—प्रणाली विश्लेषण (System analysis)। एक कुशल सुयोग्य शिक्षक को शैक्षिक तकनीकी के विविध उपकरणों एवं उपागमों का सफलता के साथ। प्रयोग कर शिक्षण-अधिगम-प्रक्रिया को सफल बनाने का प्रयास करना चाहिए।

(iv) सुनियोजित शिक्षण (Planned Teaching)—सफल, सार्थक शिक्षण के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षण सुनियोजित हो। जो शिक्षण सुनियोजित होता है, वह निश्चित रूप से सफल होता है। अतएव, शिक्षक को चाहिए कि वह पहले से यह नियोजित कर ले कि उसे पाठ्य विषय को किस कक्षा (वर्ग) में कब, क्या, किस प्रकार और किन-किन साधनों की सहायता से प्रस्तुत करना है। शिक्षण-योजना बनाते समय अध्यापक को यह ध्यान रखना चाहिए कि परिस्थिति परिवर्तन के समय उसमें अपेक्षित परिवर्तन-परिष्कार किया जा सके। इस प्रकार पाठ-योजना अनम्य या कठोर न होकर नमनशील होनी चाहिए।

(v) प्रेरणादायक शिक्षण (Stimulating Teaching)—प्रेरणादायक शिक्षण सफल अधिगम का अनिवार्य लक्ष्य माना जाता है। जिस शिक्षण में शिक्षर्थियों को अभिप्रेरित करने की जितनी क्षमता होती है, अधिगम उतना ही सफल होता है।

(vi) व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर आधारित शिक्षण (Teaching based on Individual Differences)—शिक्षार्थी की वैयक्तिक या व्यक्तिगत भिन्नता से आशय व्यक्ति के विशिष्ट लक्षण या लक्षणों से है जो उसे दूसरे व्यक्तियों से भिन्न बना देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति शारीरिक तथा मानसिक शीलगुणों की दृष्टि से दूसरे व्यक्तियों से भिन्न होता है। शारीरिक रचना, रंग-रूप इत्यादि को हम प्रत्यक्ष रूप से देख लेते हैं, और परख लेते हैं। दूसरी ओर मानसिक शीलगुण होते हैं जिनहें हम देख नहीं पाते। बुद्धि, रुचि, मनोवृत्ति, आकांक्षा, अभिक्षमता, उपलब्धि, स्मृति, अवधान इत्यादि ऐसे ही शीलगुण हैं जिनको जानने के लिए विविध विधाएँ हैं। सफल-सार्थक अधिगम के लिए यह आवश्यक होता है कि शिक्षक को शिक्षार्थियों की वैयक्तिक भिन्नताओं का ज्ञान हो। वैयक्तिक भिन्नता के नियमों पर आधारित शिक्षण सार्थक और सफल होता है।

(vii) सीखने की प्रक्रिया में मार्गदर्शन (Giving Proper Guidance in Learning)—आधुनिक शिक्षण में शिक्षक की भूमिका एक मार्गदर्शक की होती है। जैसा कि **योकम और सिम्पसन** ने लिखा है—"कुशल शिक्षण एक ऐसी नियंत्रित यात्रा है जो अनुभवों के विश्व में की जाती है जिसमें शिक्षक यात्रा

का संयोजक होता है। यात्रा की सफलता शिक्षक के भावी प्रदर्शन पर आश्रित होती हैं और मार्ग-प्रदर्शन की आवश्यकता प्रत्येक स्तर पर आवश्यक है। सर्वप्रथम उसकी आवश्यकता यात्रा का उद्देश्य निश्चित करने तथा योजना बनाने में पड़ती है, दूसरे यात्रा की साधन-सामग्री जुटाने में, तीसरे बालकों की रुचि को आकर्षित करने वाले स्थानों की ओर संकेत करने में, चौथे इन स्थानों या वस्तुओं को बालकों के लिए सार्थक बनाने में, पाँचवें यात्रियों के आराम एवं सुविधा की ओर ध्यान में और अन्त में उनको स्वानुभवों का मूल्यांकन करने में जिससे कि वे उसी प्रकार की यात्रा करने के लिए पुनः तत्पर रहें।"

इस प्रसंग में सुविख्यात शिक्षाविद् हरबार्ट के निम्नांकित विचारों का उल्लेख करना असंगत न होगा—"शिक्षक को भूल कर भी शिक्षण को न तो खेल बना देना चाहिए और न एक भारी काम। पढ़ाई एक गम्भीर कार्य है। कक्षा में विनम्रता के साथ-साथ सख्ती का प्रयोग करना उचित है। पाठ इतना सरल न ही होना चाहिए कि विद्यार्थी उस पर ध्यान न दें और न इतना कठिन होना चाहिए कि विद्यार्थी ऊब जाएँ।"

4. पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कारक
(Factors Related to Curriculum)

पाठ्यक्रम शैक्षिक प्रक्रिया का प्राण होता है। यदि शिक्षा का उद्देश्य किसी गंतव्य तक पहुँचना है तो पाठ्यक्रम वहाँ तक पहुँचने का मार्ग। पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कारकों को निम्नलिखित रूप में रख सकते हैं—

(i) पाठ्यक्रम मनोवैज्ञानिक आधारों पर आधारित होना चाहिए (Curriculum Should be based on Psychological bases)—वर्तमान युग में शिक्षा और मनोविज्ञान एक ही रथ के दो पहियों की भाँति हो गए हैं। शिक्षा मनोविज्ञान जैसे विषय का उद्भव और विकास इस तथ्य का प्रमाण है। अतएव पाठ्यक्रम-निर्माण में मनोविज्ञान के नियमों, सिद्धान्तों, स्थापनाओं तथा शोधात्मक अध्ययनों के निष्कर्षों को ध्यान में रखना चाहिए।

(ii) पाठ्यक्रम वैज्ञानिक आधारों पर आधारित होना चाहिए (Curriculum should be based on Scientific bases)—आधुनिक युग विज्ञान का युग है। विज्ञान के क्षितिज पर आए दिन नवनूतन आविष्कार होते रहते हैं। वैज्ञानिक आविष्कारों एवं वैज्ञानिक शोधों ने शिक्षा को नए आयाम दिए हैं। उदाहरण के लिए कम्प्यूटर भी विज्ञान की एक अत्याधुनिक देन है। अतएव आज के पाठ्यक्रम में कम्प्यूटर के ज्ञान का समावेश अपरिहार्य है। इसी प्रकार अन्य वैज्ञानिक जानकारी का पाठ्यक्रम में समावेश होना चाहिए।

(iii) पाठ्यक्रम क्रियात्मक और व्यवहारिक हो—पाठ्यक्रम क्रियात्मक और व्यवहारिक होना चाहिए। कुछ क्रियाएँ ऐसी होती हैं कि जिनमें विद्यार्थी अधिक रुचि लेते हैं। ऐसी क्रियाओं का पाठ्यक्रम में समुचित रूप में इनका समावेश होना चाहिए। इसके साथ ही पाठ्यक्रम को व्यवहारिक भी होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि जो ज्ञान विद्यालय में विद्यार्थियों को दिया जाये, उसे व्यवहार में परिणत किया जा सके। उदाहरण के लिए विद्यालय में छात्र विज्ञान के अन्तर्गत बहुत सी चीजें पढ़ते हैं किन्तु जब उन्हें व्यवहार में परिणत करने का प्रश्न खड़ा होता है तब वे उसे ठीक से नहीं कर पाते। पाठ्यक्रम की व्यवहारिकता का एक अर्थ यह भी है कि शिक्षार्थी को जो शिक्षा दी जाय, व्यावहारिक दृष्टि से वह उपयुक्त हो।

(iv) पाठ्यक्रम जीवन के लिए उपयोगी हो—कभी-कभी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत ऐसे विषय आ जाते हैं जिनकी मानव जीवन में कोई उपयोगिता नहीं होती। ऐसे अनुपयोगी पाठ्य-विषय या पाठ्य-विषयों से

युक्त पाठ्यक्रम के सीखने में विद्यार्थियों की कोई अभिरुचि नहीं होती और यदि विद्यार्थी ऐसी पाठ्य-वस्तु सीख भी जाते हैं तो भी जीवन में उसकी कोई उपयोगिता नहीं रह जाती। अतएव पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो शिक्षार्थी के जीवन की व्यावहारिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके, वह अधिगमकर्ता के व्यक्तिगत उपयोग तथा महत्त्व की बातें उसमें सन्निहित है।

(v) पाठ्यक्रम परिवर्तनशील और प्रगतिशील हो—पाठ्यक्रम का एक प्रमुख दोष उसकी अपरिवर्तनशीलता और प्रतिक्रियावादिता होती है। इस प्रकार का दोषपूर्ण पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के अधिगम और समाज की प्रगति की दृष्टि से उपयुक्त नहीं होता। अतएव सफल अधिगम के लिए पाठ्यक्रम का परिवर्तनशील होना आवश्यक होता है।

5. वातावरणीय कारक
(Environmental Factors)

वातावरण या पर्यावरण अंग्रेजी के environment शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। **डगलस और हालैण्ड** के अनुसार, ''वातावरण शब्द का प्रयोग उन सब बाह्य शक्तियों, प्रभावों एवं दशाओं का सामूहिक रूप से वर्णन करने के लिए किया जाता है, जो जीवित प्राणियों के जीवन, स्वभाव, व्यवहार, बुद्धि, विकास एवं परिपक्वता पर प्रभाव डालते हैं।'' बाह्य वातावरण को दो मुख्य वर्गों में रखा जा सकता है।

भौतिक वातावरण तथा सामाजिक वातावरण—पर्यावरण का भी पर्याप्त प्रभाव सीखने की प्रक्रिया पर पड़ता है अत: इसका प्रभाव निम्नांकित ढंग से सीखने की प्रक्रिया पर पड़ता है।

(i) भौतिक वातावरण (Physical Environment)—भौतिक वातावरण प्राकृतिक वातावरण का दूसरा नाम है। भौतिक वातावरण के अन्तर्गत समस्त प्राकृतिक रचना का यथा पृथ्वी, जलवायु, नदियाँ, सागर, पर्वत शृंखलाएँ, वृक्ष, पेड़-पौधे, फल-फूल, जीव-जन्तु प्रभृति आते हैं। प्रकृति के प्रांगण में ही मनुष्य के समस्त क्रिया-कलाप सम्पन्न होते हैं। मनुष्य के जन्म, जीवन और विकास पर प्राकृतिक वातावरण का गहरा प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक वातावरण का शारीरिक, मानसिक विकास पर गहरा प्रभाव पड़ता है। शिक्षा एवं सफल शिक्षण के लिए अनुकूल प्राकृतिक पर्यावरण अत्यन्त आवश्यक होता है। प्रकृति का शान्त, एकान्त, नयनाभिराम वातावरण, ज्ञानार्जन की दृष्टि से अनुकूल रहा है। इसीलिए प्राचीन भारत में 'गुरुकुलों' और 'आश्रमों' की स्थापना अनुकूल प्राकृतिक पर्यावरण में की गई थी। आज भी विद्यालयों की स्थापना में इस तथ्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए। घर का भी वातावरण ऐसा होना चाहिए जिससे शैक्षिक क्रियाओं में कोई बाधा न खड़ी हो। अनुकूल प्राकृतिक वातावरण में शिक्षण और सीखने की प्रक्रिया सफल होती है। किन्तु विपरीत वातावरण में वह अवरुद्ध हो जाती है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार पौधों के पुष्पन-पल्लवन के लिए अनुकूल मिट्टी जलवायु और प्रकाश आवश्यक होता है, उसी प्रकार शिक्षण और सीखने के लिए भी अनुकूल प्राकृतिक वातावरण होना चाहिए।

(ii) सामाजिक वातावरण (Social Environment)—मनुष्य सामाजिक प्राणी है। मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताएँ समाज में पूर्ण होती हैं। मनुष्य का जीवन, उसका अस्तित्व और उसके व्यक्तित्व का चतुर्मुखी विकास समाज में ही सम्भव है। शिक्षा भी व्यक्तित्व के सम्यक् विकास की अपरिहार्य आवश्यकता है। अतएव शैक्षिक विकास के लिए अनुकूल सामाजिक वातावरण का होना आवश्यक होता है। जिन देशों ने आज शैक्षिक क्षेत्र में आशातीत उन्नति की है, वहाँ का सामाजिक वातावरण उसके अनुकूल रहा है। अफ्रीका और एशिया के अनेक देशों का पिछड़े होने का कारण उनका सामाजिक वातावरण रहा है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययनों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि सामाजिक वातावरण व्यक्तियों के सामाजिक-बौद्धिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। जैसा कि न्यूमैन ने लिखा है—''वातावरण द्वारा शारीरिक तथा सबसे कम प्रभावित होते हैं, बुद्धि उससे अधिक, शिक्षा तथा ज्ञान-प्राप्ति उससे भी

अधिक तथा व्यक्तित्व एवं स्वभाव सबसे अधिक।" इसी प्रकार ओवेन ने लिखा है कि, "व्यक्ति का विकास पूर्णतया वातावरण पर निर्भर करता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने समाज की उपज है। बालक वैसा ही बनता है जैसा समाज उसे बनाता है। गाँव-गाँव घूमने वाले बाजारों के लड़के उसी प्रकृति के होंगे। यदि इनमें से किसी को अलग वातावरण दिया जाय तो उसकी प्रकृति में परिवर्तन आ जायेगा।"

निष्कर्ष

इस प्रकार अधिगम की सफलता अनेक कारकों पर निर्भर करती है। अतएव यह बात अवश्य स्मरण में रखनी चाहिए कि सुविज्ञ, निष्ठावान, प्रभावशाली व्यक्तित्व के अध्यापक, मेधावी, परिश्रमी, जिज्ञासु, मनोशारीरिक दृष्टि से सुस्वस्थ विद्यार्थी, युग की आकांक्षाओं, आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम, शिक्षण की अभिनव प्रविधियाँ तथा अनुकूल, उत्साहवर्द्धक पर्यावरण सफल-सकारात्मक अधिगम के आधार-स्तम्भ माने जाते हैं।

Shobha Gem

अधिगमकर्ता का विकास
एवं
शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया

(विभिन्न विश्वविद्यालयों की प्रशिक्षण कक्षाओं के छात्र-छात्राओं के लिए)

लेखक

डॉ० एस० के० पाल

एम० ए०, एम० एड०, डी० फिल०

निवर्तमान अध्यक्ष

शिक्षाशास्त्र विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लक्ष्मी नारायण गुप्त

एम० ए०, एम० एड०

निवर्तमान अध्यक्ष

शिक्षाशास्त्र विभाग

इलाहाबाद डिग्री कालेज

इलाहाबाद

मदन मोहन

एम० ए०, एम० एड०

निवर्तमान अध्यक्ष

शिक्षाशास्त्र विभाग

सी० एम० पी० डिग्री कालेज

इलाहाबाद

संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण

2013

न्यू कैलाश प्रकाशन

इलाहाबाद